''दर्शन में श्रीमद्भगवद् गीता की उपयोगिता एवं महत्व''

*डॉ. राजमल मालव
**डॉ. उमा बड़ौलिया

मुख्य भाब्दः–

1. श्रीमद्भगवद् गीता
2. आस्तिक दर्शन
3. नास्तिक दर्शन
4. भारणागति
5. अनासक्ति योग

प्रस्तावनाः–

दार्शनिक परम्परा में ''श्रीमद्भगवद् गीता की उपयोगिता एंव महत्व'' सर्वोपरि है। सत्य तो यह है कि जहां सम्सत विशयों के चिन्तन की पराकाश्ठा सामप्त होती है वही से दर्शन शास्त्र की शुरूआत होती है और दर्शन में भी जहां समस्त दर्शन की विधाओं का अन्त होता है वही से ''श्रीमद्भगवद् गीता'' का बहु आयामी चिन्तन आरम्भ होता है। ''श्रीमद्भगवद् गीता'' का दर्शन मनुष्य को केन्द्र में रखकर प्रवाहित होता है। इसका क्षेत्र सम्पूर्ण मानव समाज है। इसकी परिधि ने मानव मात्र का हित एंव उसकी समस्यायें हैं। इसमें वर्तमान विश्व की समस्त समस्याओं का समाधान निहित है। ''श्रीमद्भगवद् गीता'' में उन प्रवृत्तियों के त्याग की बात की गयी है जो मानव का अवमूल्यन करते है। आज विश्व औद्यागीकरण, मशीनरीकरण, आधुनिकीकरण की ओर गतिशील है। सम्प्रति मशीनों के जंजाल में मनुष्य अकेला हो गया है उसकी मनोवृत्तियों विभिन्न विरोधाभासों से ग्रसित हो चुकि है वह कि कर्त्तव्यविमूढ़ हो गया है। ऐसे में ''श्रीमद्भगवद् गीता'' से यह प्रेरणा ले सकता है और सामाजिक उच्चादर्शो को स्थापित कर सुखमय जीवन–यापन कर सकता है।

''श्रीमद्भगवद् गीता'' के अध्ययन का उद्देश्यः–

''श्रीमद्भगवद् गीता'' के अध्ययन द्वारा जगत् में हो रहे नैतिक मूल्यों के ह्रास को रोका जा सकता हैं इसके श्रवण–मनन से व्यक्ति संसार की किसी भी चुनौती का समाधान करने में समर्थ हो सकता है। गीता ने महाभारत जैसे युद्ध की समस्या का समाधान कर दिया, जिसकी तुलना में आज की समस्यांए तुच्छ है। यह मानव जीवन को सफल बनाने में समर्थ है। गीता का मुख्य उपदंश लोक कल्याण है। आज के युग में जब मानव स्वार्थ की भावना से ग्रसित होकर निजी लाभ के सम्बन्ध में सोचता है तो गीता के अध्ययन से मानव को परार्थ भावना का विकास करने में सफलता मिल सकती है।

अध्यात्म वीथिका की सुरम्य, सुवासित पंक्तियों के मध्य वृक्षावलों से ''श्रीमद्भगवद् गीता'' के कल्याणमण उपदेश भवदुःखदुःखित, संसारतापतापित, जगत् क्लेश क्लेशित जनों के लिए दुःख निवारक, तापहारक तथा सुखदायक हैं। अद्यावधि इस अमूल्य निथि का बहुविन्धसेवन सुधीजनों द्वारा किया जाता है। हिन्दुओं का यह पावन ग्रन्थ तो आज विश्व की पावन निधि बन चुका है।

भांकराचार्य का दार्शनिक सिद्धान्त है–अद्वैतवेदांत। ब्रहृम सत्य है और जगत् मिथ्या है तथा ब्रह्म निर्गुण, निर्वैयक्ति सार्वभौम चेतन सत्ता है। यह जगत् माया का रचा हुआ है और माया न सत् है न असत्, वह अनिवर्चनीय है। ज्ञान द्वारा हमें माया–मोह को त्यागना चाहिए और भाुद्ध ब्रह्म रूप, जो हम हैं, हो जाना चाहिए।

यही अर्थ उन्हें गीता में मिला और प्रमाणित किया। कर्म करना अज्ञान की स्थिति के लिाए ध्येय है, ज्ञान की अंतिम स्थिति ते सर्वथा निष्क्रिय है। भक्ति भी प्रारम्भिक अवस्थाओं के लिए हैं।

भांकर का अद्वैत वेदान्त भारतीय चिन्तन तथा जीवन की बड़ी प्रभावशाली धारा है। रामानुज आचार्य का दार्शनिक विचार विशिष्ट अद्वैत कहलाता है। यह भी अद्वैत है, अथति, अन्त में एक ही सत्ता को मानता है परन्तु इतनी विशेषता और है कि नए तत्व और आत्मायें भी सत्य है। अतः जगत् मिथ्या नहीं, सत्य है।

यह दर्शन भक्ति का विशेष पोशक हैं अतः रामानुज अपने गीता भाश्य में भक्ति पर बहुत बल देते है। भक्ति का मार्ग ज्ञान से भिन्न है। भक्ति कहती है– भर जाओ परमेश्वर से। भगवान ही बने रक्त का प्रवाह, वही अस्थि हो, वहीं मॉस–मज्जा हो। सच्चा भक्त वही है, जिसके रोऍं–रोऍं में भगवान समया हो।

आस्तिक दर्शन परमात्मा, जीवन और जगत् की सत्ता स्वीकार करता है। गीता में कहा गया है – जो स्वीकार करता है। गीता में कहा गया है – जो तुम्हारे सामने दिखता है यह जगत प्रत्येक मनुष्य को ''मैं हूँ'' ऐसा अनुभव होता है – यह जीव है, जो जड़–चेतन, अपरा–परा सबका स्वामी है वह ईश्वर है –

न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेते जनाधिया ।
न चैव न भविश्यामः सर्वे वयमतः परम् ।। (1)

गीता ने व्यवहार में परमार्थ की विलक्षण कला बताई है जिसमें प्रत्येक मनुष्य प्रत्येक परिस्थिति में रहते हुए भी अपना कल्याण कर सके।

सर्वकमण्यिपि सदा कुर्वाणो मद्वयपाश्रय ।
मत्प्रसादवात्नोति भाासवतं पद मत्यमम् ।। (2)

मेरा आश्रय लेने वाला भक्त सदा सह विहित कर्म करते हुए भी मेरी कृपा से भाारवत् अविनाशी पद को प्राप्त हो जाता है। गीता के अनुसार आप जहां है, जिस मत को स्वीकार करते है– चाहे वह आस्तिक हो गया नास्तिक उसी को मानते हुए गीता के अनुसार चले तो कल्याण हो जाएगा।

हम जो भी व्यवहार करते हैं उसमें अपने स्वार्थ और अभिमान का आग्रह त्यागकर सबके हित की दृष्टि से कार्य करना चाहिए। वर्तमान में भी हित हो, भविश्य में भी हित हो, हमार भी हित हो, दूसरों का भी हित हो – ऐसी दृष्टि रखकर कार्य करना चाहिए। इस प्रकार व्यवहार करने से परमात्मतत्व की प्राप्ति हो जाएगी।

सिद्धि असिद्धि में सम रहकर कार्य करना ही गीता के अनुसार व्यवहार करना है।

सुख–दुःख समें कृत्वा लाभालाभौ जया जयौ ।
ततो युद्वाय युज्यस्व नैवं पापं वाश्यसि ।। (3)2/38

योगस्थ कुरू कर्मणि सड़ग तयक्तवा धनज्जय ।

सिद्वयसिद्वयों समो भूत्वो समत्वं योग उच्येते ।। (4)2/38

भगवान श्रीकृष्ण अर्जन से कहते है कि तुम्हें कर्मफल के प्रति मोह को त्यागकर सुख–दुःख आदि द्वन्द्वो में समान भाव रखकर कर्म करना चाहिए इसी समत्व भाव के योग कहा जाता है।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैंः– हे अर्जुन। यदि मैं कर्म करने से एक क्षण के लिए भी रूक जाऊँ तो सारा विश्व नष्ट हो जाएगा। ईश्वर अनासक्त क्यों हैं इसलिए कि वे सच्चे प्रेमी है, उस सच्चे प्रेमी से ही हम अनासक्त हो सकते हैं। जहां की आसक्ति हैं, वहां जान लेना चाहिए कि केवल भौतिक आर्कशण है। (5)

भद्भगवद् गीता में भारणागति के विशय में भगवान अपनी भारण में आने की आज्ञा देते है – मामेकं भारणं ब्रज भारणागति की अपार महिमा है। (6) 18/66 जो व्यक्ति भारणागति को स्वीकार कर लेता है उसका जीवन धन्य हो जाता है। बिना पड़े उसमें वेदों का तात्पर्य स्वतः स्फुरित हो जाएगा। उसके लिए कुछ जानना, पाना और करना भेदा नहीं रह जाता है।

अनासक्ति योग का वर्णन भी गीता में वर्णित है। अनासक्ति योग का अर्थ है जिसके साथ हमारा कभी संयोग ही नहीं हुआ है, न होगा, न होना सम्भव है, उसे संसार से अनासक्त होकर योग का अनुभव हो जाना। (7)

आसक्ति मिटने पर संसार के अभाव और परमात्मा के भाव का अनुभव हो जाता है –

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ।

उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्वदर्शिभिः ।। (8)2/16

भवगान् श्री कृष्ण कहते है – हे अर्जुन। तत्वज्ञानी महापुरूश ही सत् तथा असत् तत्व को जान सकता है, जो पदार्थ सत् है, अविनाशी है, भाारवत हैं, चिरन्तन वस्तु है उसका कभी विनाश ही नहीं होता है, क्योंकि त्रिकालाबाधित होने से भूत, भविष्य तथा वर्तमान तीनों काल उसे नष्ट नहीं कर सकते हैं और जो वस्तु असत् है, विनाशो है, अनित्य है वह स्थायी, नित्य तीनों कालों में रह ही नहीं सकता है। अतः यह दिखाई देने वाला पा चभौतिक भारीर विनाशी है, विनाश होना उसका धर्म है, अतः शरीर के प्रति आसक्ति नहीं रखना चाहिए।

विशेष ज्ञान सम्पन्न योगी के लिए सभी प्राणी आत्मा ही हो जाते हैं उस अवस्था में एकत्व का अनुभव कर लेने वाले पुरूष को कौन सा मोह और कौन सा भाोक अर्थात, किसी भी प्रकार का मोह और भाोक नहीं होता है (9)

यस्मिन् सर्वणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः ।

तत्र को मोहः कः भाोक एकत्वमनुप यतः । ईशोपनिषद् (6)

सारांशः–

श्रीमद्भगवद् गीता के अनुसार अनासक्त होते ही भगवान के साथ नित्य सम्बन्ध का अनुभव स्वतः हो जाता है। भगवान के साथ सम्बन्ध जोड़ने से आसक्ति मिट जाती है। कर्मयोग और ज्ञान योग आसक्ति का नाश करते हैं, और आसक्ति का नाश होने पर भगवान् के साथ सम्बन्ध हो जाता है।

श्रीभद्भगवद्गीता का अध्ययन विश्वबन्धुता के लिए तथा वसुधैवकुटुम्बकम् की अवधारणा को चरितार्थ करने के लिए परम् आवश्यक है। भारतीय सामाजिक अवसंरचना तथा जातियों, जन–जातियों, समुदायों के लोग रहते है। अतएव

देश की एकता और अखण्डता को तथा सामाजिक समरसता को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए श्रीमद्भगवद्गीता का अध्ययन और अध्यापन वर्तमान युग में प्रासंगिक ही नहीं अपितु परम् आवश्यक है।

*व्याख्यता
संस्कृत विभाग
राजकीय महाविद्यालय, बून्दी (राज.)
**व्याख्याता
राजनीतिक विज्ञान विभाग
राजकीय कन्या महाविद्यालय, बून्दी (राज.)

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीभद् भगवद् गीता – 2/12
2. श्रीभद् भगवद् गीता – 18/56
3. श्रीभद् भगवद् गीता – 2/38
4. श्रीभद् भगवद् गीता – 2/48
5. कर्मयोग स्वामी विवेकानन्द पृष्ठ सं0 40
6. श्रीभद् भगवद् गीता – 18/66
7. गीता का अनासक्ति योग पृष्ठ सं0 87 स्वामी रामसुखदास
8. श्रीभद् भगवद् गीता – 2/16
9. वाड़मयम् पृष्ठ 89
10. ईशावास्योपनिषद पृष्ठ 6